REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 6 | MARCH - 2019

मधुबनी जिला में कृषि चुनौतियाँ एवं समस्याएँ : एक समीक्षा

विकास कुमार सुधाकर
शोधार्थी , वाणिज्य , वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग ,
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। भारत में कृषि सिंधु घाटी सभ्यता के दौर से की जाती रही है। 1960 के बाद कृषि के क्षेत्रा में हरित क्रांति के साथ नया दौर आया। सन् 2007 में भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एवं सम्बन्धित कार्यों (जैसे वानिकी) का सकल घरेलू उत्पाद में हिस्सा 16.6 प्रतिशत था। उस समय सम्पूर्ण कार्य करने वालों का 52 प्रतिशत कृषि में लगा हुआ था।

भारत में कृषि में 1960 के दशक के मध्य तक पारंपरिक बीजों का प्रयोग किया जाता था जिनकी उपज अपेक्षाकृत कम थी। उन्हें सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती थी। किसान उवरकों के रूप में गाय और गोबर आदि का प्रयोग करते थे।

1960 के बाद उच्च उपज बीज का प्रयोग शुरु हुआ। इससे सिंचाई और रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ गया। कृषि में सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ने लगी। इसके साथ ही गेहूँ और चावल के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई जिस कारण इसे हरित क्रांति भी कहा गया।

भारत में कृषि में परंपरागत औजारों जैसे खुरपी, कुदाल, हँसिया, बल्लम, के साथ ही आधुनिक मशीनों का प्रयोग भी किया जाता है। किसान जुताई के लिए ट्रैक्टर, कटाई के लिए हार्वेस्टर तथा गहाई के लिए थ्रेसर का प्रयोग करते हैं।

2010 एफ.ए.ओ. विश्व कृषि सांख्यिकी, के अनुसार भारत के कई ताजा फल और सब्जियाँ, दूध, प्रमुख मसाले आदि को सबसे बड़ा उत्पादक ठहराया गया है। रेशेदार फसले जैसे जूट, अरंडी के तेल के बीज आदि का भी उत्पादक है। भारत गेहूँ और चावल की दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत, दुनियाँ का दूसरा या तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक है कई चीजों का जैसे सूखे फल, वस्त्रा कृषि–आधारित कच्चे माल, जड़ें और कंद फसले, दाल, मछलियाँ, अंडे, नारियल, गन्ना और कई सब्जियाँ 2010 मई भारत को दुनियाँ का पाँचवा स्थान हासिल हुआ जिसके मुताबिक उसने 80 प्रतिशत से अधिक कई नकदी फसलों का उत्पादन किया जैसे कॉफी और कपास आदि।

भारत ने पिछले 69 वर्षों में कृषि विभाग में कई सफलताएँ प्राप्त की है। ये लाभ मुख्य रूप से भारत को हरित क्रांति, पावर जेनरेशन, बुनियादी सुविधाओं, ज्ञान में सुधार आदि से प्राप्त हुआ। भारत में फसल पैदावार अभी भी सिर्फ 30 प्रतिशत से 60 प्रतिशत ही है। अभी भारत में कृषि प्रमुख उत्पादकता और कुल उत्पादन लाभ के लिए क्षमता है। विकासशील देशों के सामने भारत अभी भी पीछे है। इसके अतिरिक्त, खराब अवसंरचना और असंगठित खुदरा के कारण, भारत ने दुनिया में सबसे ज्यादा खाद्य घाटे से कुछ का अनुभव किया और नुकसान भी भुगतना पड़ा।

भारत में में सिंचाई का मतलब खेती और कृषि गतिविधियों के प्रयोजन के लिए भारतीय नदियों, तालाबों, कुओं, नहरों और अन्य कृत्रिम परियोजनाओं से पानी की आपूर्ति करना होता है। भारत जैसे देश में 64 प्रतिशत खेती करने की भूमि, मानसून पर निर्भर होती है। भारत में सिंचाई करने का आर्थिक महत्त्व–उत्पादन में अस्थिरता को कम करना, कृषि उत्पादकता की उन्नति करना, मानसून पर निर्भरता को कम करना, खेती के अंतर्गत अधिक भूमि लाना, काम करने के अवसरों का सृजन करना, बिजली और परिवहन की सुविधा को बढ़ाना, बाढ़ और सूखे की रोकथाम को नियंत्राण में करना।

हाल ही में भारत सरकार ने पूरी तरह से कृषि कार्यक्रम का मूल्यांकन करने के लिए किसान आयोग का गठन किया। हालांकि सिफारिशों का केवल एक मिश्रित स्वागत किया गया है। नवम्बर 2011 में, भारत ने संगठित खुदरा के क्षेत्रा में प्रमुख सुधारों की घोषणा की। इन सुधारों में रसद और कृषि उत्पादों की खुदाई शामिल हुई। यह सुधार घोषणा प्रमुख राजनीतिक विवाद का कारण भी बना।

बिहार की अर्थव्यवस्था खेती पर निर्भर है। यहाँ की लगभग 80 फीसदी आबादी की रोजी–रोटी खेती व पशुपालन से चलती है। सिंचाई व्यवस्था के कमजोर होने के कारण यहाँ कृषि पैदावार मानसून आधारित है। अधिकांश जिलों के स्टेट बोरिंग ठप हैं। नहरों की स्थिति भी अच्छी नहीं है। कई नदियाँ बरसाती बन गयी हैं। अधिकांश कुएँ मिट गए हैं। ऐसे में किसानों के पास पटवन के लिए मानसून के अलावा निजी बोरिंग की विकल्प है, जो खर्चीला है। डीजल व कृषि यंत्राों की बढ़ती कीमतें किसानों की कमर तोड़ रहे हैं। लघु व सीमांत किसानों के पास अपना पंपिंग सेट नहीं होता है। वे प्रति घंटे के हिसाब से पटवन का पैसा चुकाते हैं। उन्हें कर्ज लेकर खेती करनी होती है। ऐसे में मौसम की मार उन्हें और कर्जदार बना देती है। ऐसा नहीं है कि प्रदेश के पास पानी की कमी है। बाढ़ व बेमौसम बारिश के पानी की उपलब्धता को सहेजना सीख लें तो ऐसे संकट का सामना किया जा सकता है। जल प्रबंधन की दीर्घकालिक योजना पर सरकार को काम करना चाहिए। जलवायु परिवर्त्तन का नतीजा कई रूपों में हमारे सामने आएगा। इसका सबसे बुरा प्रभाव खेती पर ही पड़ेगा। सो, हमें अभी से सचेत हो जाना चाहिए।

बिहार से 2000 में झारखण्ड के अलग हो जाने के बाद बिहार से खनिज उद्योग तथा विद्युत उत्पादन इकाइयों के अलग हो जाने के बाद बिहार मुख्यतः कृषि प्रधान प्रदेश रह गया। करीब 93 लाख हेक्टेयर क्षेत्राफल वाले प्रदेश में सकल बुवाई क्षेत्रा 76 लाख हेक्टेयर तथा 56 प्रतिशत सिंचित क्षेत्रा होने का सरकारी आँकड़ा है। कृषि के लिए उत्तम श्रेणी की भूमि के साथ यहाँ गंगा, बूढ़ी गंडक, सोन, बागमती, अधवारासमूह, कमला, कोसी, महानन्दा जैसी प्रमुख नदियों के साथ दर्जनों छोटी नदियाँ है। बिहार देश का सबसे समृद्ध जल संसाधन वाला क्षेत्रा है। यहाँ की 90 प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है, जिसमें खेतिहर श्रमिकों की बड़ी संख्या हैं यहाँ धान, गेहूँ, मक्का, दलहन के अवाला सब्जियों, फलों तथा वाणिज्यिक फसल गन्ना तथा जूट की भी खेती होती है। बावजूद इन सारी परिस्थितियों के बिहार की खेती तथा खेतिहर समस्या ग्रस्त है।[2]

बिहार में कृषि की समस्या को आर्थिक सामाजिक, दोनों दृष्टिकोण से देखा जा सकता है। उत्तर बिहार का विस्तृत भू.भाग जहाँ बाढ़ से आक्रान्त रहता है, वहीं दक्षिण बिहार का क्षेत्रा सूखे से प्रभावित रहता है। आजादी के बाद जितनी भी सरकारें बनी सभी ने बाढ़ तथा सुखाड़ की समस्या की अनदेखी की तथा उचित समाधान का रास्ता नहीं ढूँढा। इस प्राकृतिक आपदा से प्रत्येक वर्ष हजारों जीवन तथा अरबों की सरकारी, गैरसरकारी सम्पत्ति की क्षति के आँकड़ों के बावजूद नदियों के जल प्रबन्धन पर कोई कदम नहीं उठाया गया। नदियों का पानी हिमालय से निकलकर नदियों के माध्यम से गंगा और फिर समुद्र में जाता रहा तथा बिहार की धरती बाढ़ तथा सूखे से तबाह होती रही। गाद से नदियाँ भरती जा रही हैं, छोटी नदियाँ मरती जा रही है। कुछ मरती नदियों को बचाने में सिविल सोसाइटी तथा समाजवोवी अच्छा प्रयास कर रहे हैं। नदियों पर अभी तक 3675 किमी किमी, बाँध बना चुकी है एवं उनके और विस्तार तथा उच्चकीरण पर सारी ऊर्जा लगा रही है, उनके टूटने और बार–बार बाँधने के खेल में राजनेता, अभियन्ता तथा अभिकर्ता मालामाल हो रहे है। बिहार में 19 जिलों की 76 प्रतिशत जनसंख्या और 73 प्रति से ज्यादा कृषि क्षेत्रा प्रभावित होते हैं। तीन दशक के सरकारी आँकड़े बताते हैं कि करीब 7 हजार से अधिक मानव जीवन की क्षति हुई है।

मधुबनी जिला में कृषि चुनौतियाँ एवं समस्याएँ :

विकास दर बढ़ाने का मूलमन्त्रा कृषि ही है अतएव इस क्षेत्रा के लिए ठोस व प्रभावी नीतियों के क्रियान्वयन से ही सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की घुँघली होती तस्वीर को उजला बनाना सम्भव है।

कृषि देश एवं राज्य की अर्थव्यवस्था की केन्द्र बिन्दु व मधुबनी जिला के किसानों के जीवन की धुरी है। आर्थिक जीवन का आधार, रोजगार का प्रमुख श्रोत तथा विदेशी मुद्रा अर्जन का माध्यम होने के कारण कृषि को राज्य की आधारशिला कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। मधुबनी जिला की कुल श्रमशक्ति का लगभग 60 प्रतिशत भाग कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित क्षेत्रों से ही अपना जीविकोपार्जन कर रही हैं। अतः यह कहना समीचीन होगा कि कृषि के विकास, समृद्धि व उत्पादकता पर ही देश का विकास व सम्पन्नता निर्भर है।

स्वतन्त्राता के पश्चात कृषि को देश की आत्मा के रूप में स्वीकारते हुए एवं खेती को सर्वोच्च प्रथमिकता प्रदान करते हुए देश के प्रथम प्रधानमन्त्राी जवाहलाल नेहरू ने स्पष्ट

किया था कि ''सब कुछ इन्तजार कर सकता है मगर खेती नहीं।'' इसी तथ्य का अनुसरण करते हुए भारत सरकार कृषि क्षेत्रा को विकसित करने एवं कृषकों की आर्थिक स्थिाति में सुधार करने हेतु अनेक कार्यक्रमों, नीतियों व योजनाओं का संचालन कर रही है। सरकार ने वर्ष 1960–61 में भूमि सुधार कार्यक्रम का सूत्रापात किया जिससे किसानों को भूमि का मालिकाना हक प्राप्त हुआ। इसी प्रकार सरकार ने भू–जोतों की अधिकतम सीमा तथा चकबन्दी जैसे कार्यक्रमों को प्राथमिकता प्रदान की जिससे कृषक वर्ग लाभान्वित हो सके।

इसी क्रम में, कृषि विकास में वित्त की भूमिका को दृष्टिगत रखते हुए सरकार ने किसानों को उचित ब्याज दरों पर, सही समय पर ऋृण उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए संस्थागत साख व्यवस्था को प्राथमिकता प्रदान की। इसके लिए सहकारी ऋृण व्यवस्था, बैंकों के राष्ट्रीयकरण, नाबार्ड व क्षेत्राीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना जैसे प्रभावी कदम उठाए गए। ज्ञातव्य है कि वर्ष 1950–51 में कृषि साख में संस्थागत साख का योगदान मात्रा 3.1 प्रतिशत था जो कि वर्तमान में बढ़कर 55 प्रतिशत से अधिक हो गया है। किसानों को आसानी से अल्पावधि ऋृण उपलब्ध कराने हेतु वर्ष 1998–99 में 'किसान क्रेडिट योजना' प्रारम्भ की गई। रिजर्व बैंक की रिपोर्ट 2016–17 के मुताबिक इस योजना के तहत अब तक 3,50,80,000 किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जा चुके हैं जिनकी कुल ऋण आवंटन सीमा 1,97,607 करोड़ रूपए है।

स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से भी नाबार्ड किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने हेतु प्रयासरत है। इसी प्रकार ग्राम आधारित विकास फण्ड की स्थापना गाँवों में आधारभूत संरचना को सुदृढ़ करने हेतु की गई ताकि किसान वर्ग इससे लाभान्वित हो सके तथा कृषि विकास को सुनिश्चित किया जा सके। ज्ञातव्य है कि वर्ष 2016–17 में कृषि ऋण की राशि 2,87,000 करोड़ रूपए दर्ज की गई। इन सबके कारण किसान महाजनों व साहूकारों के ऋण जाल से कुछ सीमा तक मुक्त हुए हैं तथा कृषि विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

गरीबी तथा ऋणग्रस्तता के कारण किसान अपनी उपज कम कीमतों पर बिचौलियों को बेचने के लिए बाध्य हैं। इन बिचौलियों के जाल से किसानों को मुक्त करवाने तथा विपणन व्यवस्था में सुधार लाने हेतु सरकार ने नियंत्रित मण्डियों के विस्तार, कृषि उपज के श्रेणीकरण व प्रभावीकरण, माल गोदामों की व्यवस्था, बाजार एवं मूल्य सम्बन्धी सूचनाओं का प्रसारण व सहकारी विपणन व्यवस्था का प्रबन्धन जैसे महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं।

कृषि का विकास सम्पन्नता कृषि उत्पादन वृद्धि के साथ ही उत्पादित उपज के उचित मूल्य प्राप्ति पर भी निर्भर है। गौरतलब है कि देश के अधिकांश छोटे किसान गरीबी के दुष्चक्र में जकड़े हुए हैं।

बिहार के विशेषकर मधुबनी जिला के कृषि क्षेत्रा को मजबूत आधार प्रदान करने के लिए सरकार कृषि क्षेत्रा में अधिक निवेश करने, राज्यों के बजट में कृषि को प्राथमिकता देने हेतु प्रोत्साहित करने, नवीन कृषि तकनीक के उपयोग को प्रेरित करने तथा कृषि उत्पादन में आने वाली समस्त बाधाओं का निवारण करने हेतु सतत प्रयास कर रही है। राष्ट्रीय किसान आयोग ने देश में कृषि की प्रगति सुनिश्चित करने हेतु जलवायु के अनुकूल कृषि आर्थिक तकनीकों के इस्तेमाल तथा हरित क्रान्ति से लाभान्वित प्रदेशों में अनाज संरक्षण की व्यवस्था अपनाने पर जोर दिया है, जिस पर क्रियान्वयन प्रारम्भ कर दिया गया हैं। कृषि को समुन्नत बनाने हेतु ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में मृदा–संरक्षण, जल–संरक्षण, जल–श्रोतों के पुनरूद्धार, ऋण व बीमा सुधार, विपणन व्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी व आगत आपूर्ति में सुधार पर जोर दिया गया। फसल की उत्पादकता में मिट्टी की किस्म, पोषक तत्व व जलग्रहण क्षमता के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए गाँवों में सचल मिट्टी परीक्षण इकाइयाँ

स्थापित की गई। इसी प्रकार किसानों को कृषि, पशुपालन, मत्स्य–पालन आदि से सम्बन्धित सूचनाएँ शीघ्र व समय पर उपलब्ध कराने हेतु ग्राम संसाधन केन्द्रों की स्थापना की गई है।

इन सब प्रयासों व योजनाओं के क्रियान्वयन के बावजूद वर्तमान में बिहार विशेषकर मधुबनी जिला में कृषि अर्थव्यवस्था संकट के दौर से गुजर रही है। वैश्वीकरण के इस प्रतिस्पर्धी युग में कृषि व कृषकों पर खतरे के बादल मंडरा रहे हैं। विडम्बना है कि राज्य की आय में कृषि का अंश उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है जबकि कृषि में संलग्न कार्यशील जनसंख्या का अनुपात लगभग स्थिर–सा है। दोषपूर्ण भू–धारण प्रणाली, उप–विभाजन एवं अपखण्डन के परिणामस्वरूप अनार्थिक जोतों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है। ज्ञातव्य है कि देश की लगभग 78 प्रतिशत कृषि जोतें 2 हेक्टेयर से कम की हैं। इसी प्रकार अभी भी कृषिगत भूमि का दो–तिहाई भाग मानसून का जुआ है, केवल एक–तिहाई भाग ही सिंचित है। ऐसी निराशाजनक स्थिति में सूखा, तूफान, बाढ़ व ओलावृष्टि जैसी प्राकृतिक आपदाओं का कहर भी किसानों को झेलना पड़ता है तथा इन अप्रत्याशित संकटों के कारण किसान ऋण जाल में फंस जाते हैं। निराशाजनक तथ्य यह है कि ऋण जाल के दुष्चक्र में फंसे किसानों में आत्महत्या की घातक प्रवृत्ति बढ़ रही है जो कि देश में विकास के नाम पर कलंक है।

बिहार की कृषि की प्रमुख निम्न समस्याएँ ऐसी हैं, जिनसे बिहार कृषि शताब्दियों से पीड़ित है।[7]

भूमि पर जनसंख्या का निरंतर बढ़ता हुआ भार :

बिहार विशेषकर मधुबनी जिला में जनसंख्या तीव्रगति से बढ़ रही है, अतः भूमि पर जनसंख्या का भार निरंतर बढ़ता जा रहा है। जनसंख्या वृद्धि के कारण प्रति व्यक्ति उपलब्ध भूमि का औसत कम होता जा रहा है।

भूमि का असंतुलित वितरण :

एक ओर जनसंख्या का भार भूमि पर बढ़ता जा रहा है, प्रति व्यक्ति खेती योग्य भूमि कम होती जा रही है, दूसरी ओर भूमि का वितरण अत्यंत असंतुलित है। बिहार में आज भी किसानों के पास समस्त कृषि भूमि का 62 प्रतिशत है तथा 90 प्रतिशत किसानों के पास कुल कृषि भूमि का केवल 38 प्रतिशत है।

कृषि की न्यून उत्पादकता :

1970 तक देश के अधिकांश भागों में औसत उत्पादन स्तर अधिकांश विकसित व कई विकासशील देशों (इण्डोनेशिया, फिलिपीन्स, मेक्सिको, ब्राजील, ईसीएम के आदि) से भी काफी कम रहा, किन्तु 'हरित क्रांति' एवं निरन्तर सरकार द्वारा कृषकों को लाभप्रद मूल्य दिलाने की प्रवृत्ति से कृषक अनेक प्रकार की नई तकनीकि अपनाते रहे हैं। रबी की फसल काल में सरसों एवं खरीफ में सोयाबीन व मूंगफली का बढ़ता उत्पादन सरकार द्वारा ऊँची कीमतें निर्धारित करने से ही सम्भव हो सका है। आज राजस्थान सरसों एवं तिल, गुजरात मूंगफली एवं मध्य प्रदेश सोयाबीन उत्पादक प्रमुख प्रदेश बन गये हैं।

उत्पादन कम होने के कारण :

कृषि उत्पादन संबंधी मधुबनी जिला के कृषकों को पर्याप्त अनुभव नहीं हैं, किन्तु अनेक बार शीत लहर, पाला व अनेक बार ओले अथवा सर्दी फसल नष्ट कर देते हैं। उसे अपने श्रम का उचित प्रतिफल प्राप्त नहीं हो पाता। अतः वह कृषि को व्यवसाय के रूप में नहीं बल्कि, जीवन–यापन की प्रणाली के रूप में अपनाता है। स्वभावतः वह वांछनीय मात्राा में उत्पादन उपलब्ध नहीं कर सकता। किसान की इसी भाग्यवादी प्रवृत्ति में परिवर्त्तन करने की एक रीति यह है कि उसे अधिकाधिक शिक्षित करने का प्रयत्न किया जाए। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक संकटों का सामना करने के लिए वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग करने की चेष्टा करनी चाहिए।

खाद का दुरुपयोग :

भारत में पशुओं की संख्या अत्यधिक है और उनके गोबर तथा मूत्रा से प्रतिवर्ष 2.89 करोड़ टन खाद प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त कम्पोस्ट तथा अन्य बेकार वस्तुओं से लगभग 93 लाख टन खाद उपलब्ध हो सकती है। दुर्भाग्य से मधुबनी जिला में गोबर का अधिकांश भाग ईंधन के रूप में जला दिया जाता

है, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य सस्ते ईंधन का अभाव है। फलतः खेतों को पर्याप्त मात्राा में खाद नहीं मिल पाती, जिससे उत्पादन की स्थिति अच्छी नहीं है।

सिंचाई के साधनों का सीमित विकास :

भारतीय कृषि प्रधानतः मानसून पर निर्भर है, क्योंकि आज भी कुल कृषि योग्य भूमि के 41 प्रतिशत में सिंचाई होती है। देश में वृहत और मध्यम सिंचाई योजनाओं के जरिए सिंचाई की पर्याप्त संभावनाओं का सृजन किया गया है। देश में सिंचाई की कुल संभावना वर्ष 1991–92 के 81.1 मिलियन हेक्टेअर से बढ़कर मार्च 2017 तक 172.77 मिलियन हेक्टेअर हो गई है। मानसून पर इतनी अधिक निर्भरता का प्रभाव यह होता है कि देश के अधिकांश भाग की कृषि प्रकृति की दया पर निर्भर है।

उच्च गुणवत्ता वाले बीजों की कमी :

बिहार विशेषकर मधुबनी जिला में किसानों के लिए उच्च गुणवत्ता वाले बीजों की प्रायः कमी बनीं रहती है। फलस्वरूप उसे बाहार से सस्ता और घटिया बीज ही उपलब्ध हो पाता है, इससे भी किसानों की आय में कमी आ जाती है। इसके लिये सरकारी मशीनरी की कार्यप्रणाली एवं लालफीताशाही समान रूप से दोषी है। अच्छे तथा सुधरी हुई किस्मों के बीजों का प्रचार सामुदायिक विकास केन्द्रों के माध्यम से किया जाना चाहिए तथा पंचायतों एवं सरकारी सहकारी समितियों के द्वारा बढ़िया बीजों की वितरण व्यवस्था को विश्वसनीय एवं सुनिश्चित करना आवश्यक है।

भूमि की शक्ति का ह्रास :

दीर्घ अवधि में निरंतर प्रयोग में आने के कारण भारतीय कृषि भूमि की उत्पादकता का ह्रास हो गया है। अतः भूमि की खोई हुई शक्ति को पुनः प्राप्त करने के लिए उसमें कम्पोस्ट खाद या प्राकृतिक जीवंश से पूर्ण खाद तथा उर्वरक देकर उसकी उपजाऊ शक्ति बढ़ाने की चेष्टा की जाए।

भूमि का उपविभाजन एवं उपखण्डन :

बिहार विशेषकर मधुबनी जिला में 90 प्रतिशत किसानों के पास औसत 0.2 हेक्टेयर से भी कम भूमि है। इतना ही नहीं यह भूमि कई टुकड़ों में बंटी हुई है। इतने छोटे–छोटे भू–खण्डों पर खेती करना आर्थिक दृष्टि से उपादेय नहीं है। इससे भी कृषि एवं कृषक की दशा हीन रहती है। भूमि के छोटे–छोटे टुकड़ों की समस्या को हल करने के लिये सभी राज्यों में चकबन्दी कीयोजनाएँ चालू है। इन योजनाओं को भी सफल बनाने में भी पंचायतों एवं सहकारी समितियों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए और भूमि के अधिकांश भाग को खेती के लिये लाभदायक बनाने की चेष्टा करनी चाहिए।

कृषि साख संस्थाओं की कमी :

बिहार में कृषि कार्यों के लिए करोड़ों रुपये की साख की आवश्यकता प्रतिवर्ष होती है। कुछ दशक पूर्व तक इसकी पूर्ति महाजन, साहूकार एवं देशी बैंकरों द्वारा की जाती थी, किन्तु अब नियोजित अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत कृषि एवं प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रा घोषित किया जा चुका है। अब राज्या की बैंकिंग व्यवस्था अपने कुल ऋणों का एक निश्चित प्रतिशत इस क्षेत्रा के लिए देने को बाध्य है।

विक्रय व्यवस्था की समस्या :

बिहार विशेषकर मधुबनी जिला में किसान की एक महत्त्वपूर्ण समस्या यह रही है कि उसे अपना माल मण्डियों में बेचना पड़ता है। ये मण्डियाँ या तो बहुत दूर हैं, जहाँ पहुँचने के लिए यातायात के साधन पर्याप्त नहीं हैं या इनके विक्रय की व्यवस्था ठीक नहीं है। अतः किसान को अपने माल के उचित दाम प्राप्त करने में कठिनाई होती है। इस कठिनाई के कारण ही कभी–कभी तो वह अपना माल ग्राम के साहूकार को ही बेच देता है, जिससे उसे और भी कम मूल्य प्राप्त होता है।

योजनाओं के दौरान भारतीय कृषि नीति :

योजनाओं के दौरान अपनाई गई भारतीय कृषि नीति के मुख्य तत्त्व निम्नलिखित हैं–

- **भूमि सुधार**
- **सहकारिता तथा चकबंदी**
- **योजनाओं में जनता की भागीदारी के लिए संस्थाएँ संस्थात्मक साख व्यवस्था**
- **वसूली व समर्थन कीमतें**
- **कृषि आगतों पर आर्थिक सहायता**

कृषि में निवेश की प्रवृत्ति :

किसी भी पिछड़ी हुई अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास के साथ साथ सकल घरेलू उत्पाद में प्राथमिक क्षेत्रा का हिस्सा कम होता जाता है। इससे सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्रा के हिस्से में भी गिरावट होती है। यह बात भारतीय आंकड़ों से भी स्पष्ट होती है। 1950–51 में साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का हिस्सा 55.1 प्रतिशत था जो कम होते–होते 1981–82 में 37.6 प्रतिशत तथा 2015–16 में 19.8 प्रतिशत रह गया। किसी भी क्षेत्रा का विकास उसमें आधारिक संरचना के विकास पर निर्भर करता है और यदि निवेश या पूंजी निर्माण में कमी होती है, तो आधारिक संरचना के विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कृषि में कम पूंजी निर्माण का अर्थ होगा सिंचाई, ग्रामीण सड़ाकों व पुलों, ग्रामीण बाजारों, ऊर्जा इत्यादि का कम विकास जिससे कृषि विकास पर भी बुरा असर पड़ेगा।

बढ़ती आर्थिक सहायता :

कृषि क्षेत्रा में गिरते हुए सार्वजनिक निवेश का प्रमुख कारण बढ़ता हुआ चालू व्यय है। पिछले वर्षों से कृषि क्षेत्रा में कुल सार्वजनिक व्यय का एक बढ़ता हुआ हिस्सा चालू व्यय के लिए प्रयोग किया जा रहा है। चालू व्यय में वृद्धि का कारण कृषि आगतों (विशेष तौर पर उर्वरक, बिजली तथा सिंचाई) को दी जाने वाली आर्थिक सहायता है। उदाहरण के लिए, खाद्य सहायता जो 2000–01 में 12,060 करोड़ रूपए थी, 2015–16 में 55,314 करोड़ रूपए हो गई।

जैसाकि ए. वैद्यनाथ ने कहा है, न केवल बढ़ती हुई आर्थिक सहायता का भार अर्थव्यवस्था के लिए असहनीय होता जा रहा है, अपितु कृषि आगतों की कीमतों को बहुत कम रखने के कारण उनका लापरवाही से अन्धाधुन्ध दुरूपयोग भी हो रहा है जिससे उत्पादन की लागतों बढ़ रही हैं, जल संसाधनों का प्रदूषण हो रहा है, भूमिगत जल संसाधनों का आवश्यकता से अधिक शोषण किया जा रहा है, तथा भूमि का अधःपतन हो रहा है। वैद्यनाथ के अनुसार, आर्थिक सहायता कम करने का प्रमुख राजनैतिक औचित्य यह है कि इससे किसानें के केवल एक छोटे से वर्ग को लाभ हुआ है–यह वर्ग बड़े किसानों का है जो बिजली के पम्पों, नहर सिंचाई योजनाओं, उर्वरकों, साख सुविधाओं इत्यादि का अधिक उपयोग करता है। इस वर्ग को प्रदान की जाने वाली आर्थिक सहायता में लगातार वृद्धि का परिणाम यह हुआ है कि आम ग्रामीण जनता के लिए आवश्यक आर्थिक व सामाजिक आधारिक संरचना के विकास के लिए उपलब्ध साधनों में कमी हुई है।

कृषि एक अद्वितीय व्यवसाय है, क्योंकि इसका उद्देश्य खाद्य उत्पादन है। इतना ही नहीं बल्कि यह उत्पाद को संसाधित करता है और उसका वितरण भी करता है। हर स्तर पर यह लाभकारी समाज–हितकारी और पारिस्थितिक रूप से सार्थक है। हमारी वर्तमान कृषि प्रणाली किसी भी मानदण्ड पर खरी नहीं उतरती है। अगर हमारे छोटे किसान आधुनिक फूड सप्लाई चेन का हिस्सा बनना चाहें तो यह उनके लिए बहुत महंगी है। वे इसका खर्च नहीं उठा सकते। परिवहन, भंडारण और दूरसंचार सुविधाओं की भारी कमी, भूमि की कमी, सूचना एवं विशेषज्ञता का अभाव, राजनीतिक दांव–पेचों का खतरा और आर्थिक सहायता की कमी कुछ ऐसे मुद्दे हैं, जिन्होंने कृषि को अलाभकारी बना दिया है।

विमुद्रीकरण के कारण किसान भी मुद्रारहित भुगतान और डिजीटल तारीके से काम करने को मजबूर हो गए हैं। सरकार को चाहिए कि वह किसानों का हित साधने के लिए 'ईज–ऑफ–डूईंग– बिजनेस के साथ–साथ अन्य कुछ तरीकों पर भी ध्यान दे।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि दरअसल, सरकारी खरीद के पुख्ता इंतजाम नहीं हैं। खाद्य मंत्राालय का डाटा दिखाता है कि गेंहू और चावल की खरीद के सबसे ज्यादा केन्द्र बिहार में हैं, जबकि बिहार में इन फसलों की खरीद नहीं के बराबर दिखाई जाती है। होना यह चाहिए कि ऐसे खरीद केन्द्रों को अधिक से अधिक किसानों और अधिक से अधिक फसलों को जोड़ते जाना चाहिए। सरकार के 'फील–गुड' या 'अच्छे दिन' वाले नारे को सफल बनाने के लिए कृषि और किसानों के जीवन को आगे बढ़ाने की बहुत जरूरत है।

संदर्भ स्रोत :

1. Baba, S.H., Wahi, M.H., Shaheen, F.H., Zargar, B.A. and Kubrevi, S.S. (2011). Scarcity of agricultural labour in cold – arid Ladakh: Extent, implication, backward bending and coping mechanism. Agric. Econ. Res. Rev., 24, New Delhi, pp. 112-114.
2. Ibid.
3. Ibid.
4. Jeyashree, P., Subramaninan, N., Murali, N. and Peter, S.M. (2010) Economic analysis of MGNREGS: A study. Southern Economist, 49(7), pp. 13-16.
5. Kumar, P., Anjani Kumar, P. Shinoj and S.S. Rau (2010). 'Estimation of demand elasticity for food commodities in India'. Agricultural Economics Research Review, 24 (10), pp. 47-48.
6. Swaminathan and Ayar (2011) submitted a report to the Agricultural Ministry, Government of India, pp. 123-125.
7. Sivasakthi et al (2011) Employment, Income and Labour Supply Decision of Rural Households : An Economic Analysis of MGNREGS in Tamil Nadu Agricultural Economics Research Review Vol. 24 (Conference Number) pp 473-484.
8. Prabhakar,C., Sita Devi.K. and Selvam,S. (2011). Labour Scarcity – its immensity and impact on agriculture. Agric. Econ. Res. Rev., 24(conference), pp. 373-380.
9. Akhil, A. and Bijoyata,Y. (2011). Recent developments in farm labour availability in India and reasons behind its short supply. Agric. Econ. Res. Rev., 24(conference), pp 381-390.
10. India Labour and Employment Report (2014), India Labour and Employment Report, 153-155.
11. Economic Survey 2018, Bihar, Patna, pp. 126-130.
12. Fact sheet of Madhubani District, 2018, pp. 131-134.
13. Dr. Muna, Kalyani (2015); Unorganised Workers: A Core Strength of Indian Labour Force: An Analysis, International Journal of Research in Business Studies and Management Volume 2, Issue 12, PP 44-56
14. Kalpana, devi & U.V.Kiran (2015), Work Related Musculoskeletal Disorders Among Workers In Unorganized Sector, International Journal of Technical Research and Applications, Volume 3, Issue 3, PP. 225-229.